आत्मधर्म

मासिक : वर्ष-७ ❀ अंक-३ ❀ नवम्बर २०१२

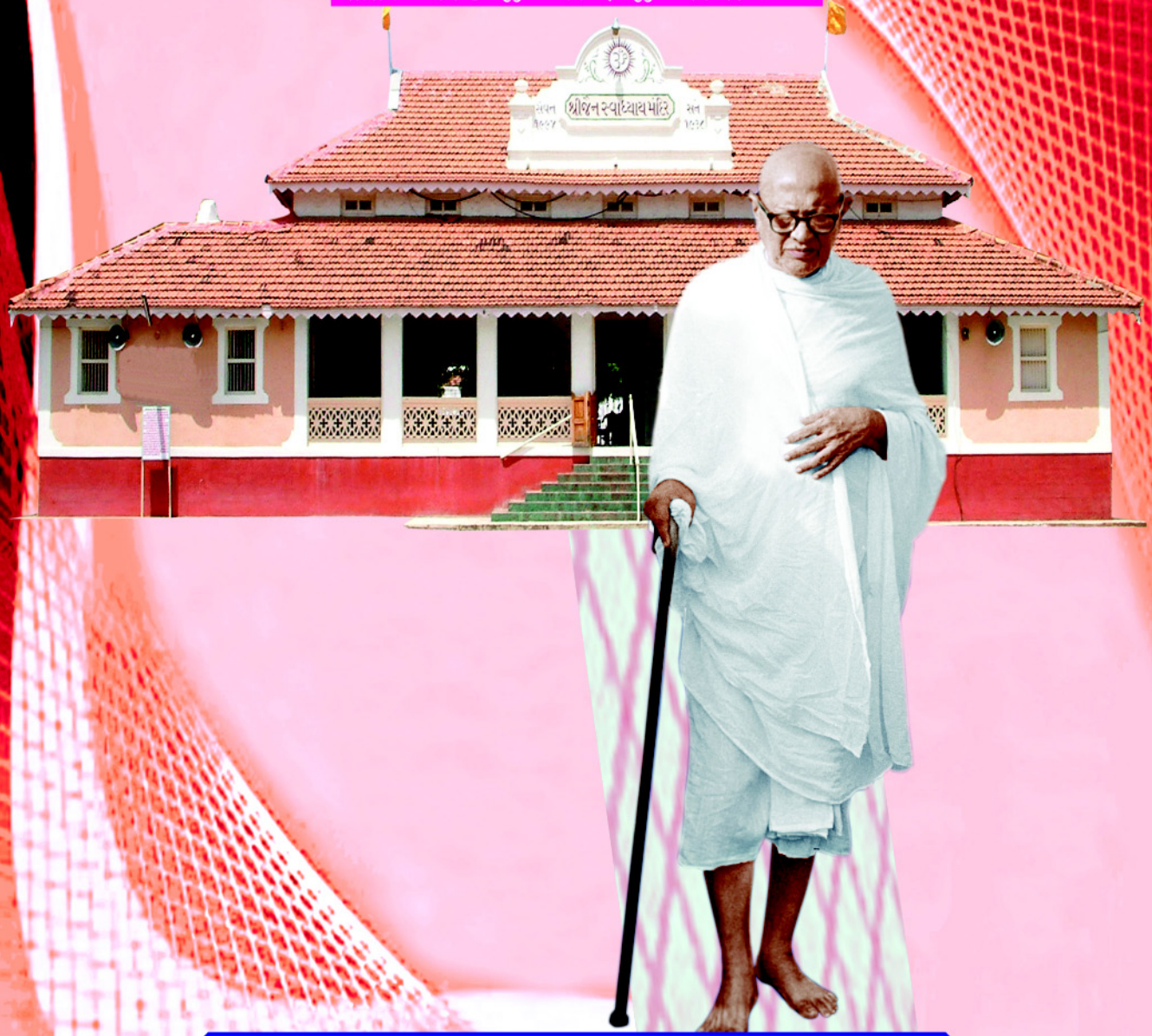

स्वर्णपुरीमें बिराजे श्री गुरुवर कहान रे,
अमृतमयी वाणी बरसती, स्वाध्यायमंदिर सुखकार रे ।
स्थापना समयसारकी उत्सव मंगलकार है,
बहिनश्रीको विभूषित किया "भगवती" अहो आश्चर्यकार है ।

(कार्तिक शुक्ला १ के दिन दि. १४-११-१२को सुप्रभात दिन है। पूज्य गुरुदेवश्री इस पर्वके दिन उगती प्रभातमें भक्तोंको कुछ अपूर्व वचन द्वारा निहाल करते थे और पूज्य बहिनश्रीको इसी प्रसंग पर भक्तजन कुछ अमृत पिलाने कहते तो, वे उत्तम अमृत पिलाती और भक्त निहाल हो जाते थे। वह मंगल आशीर्वाद यहाँ दिया जाता है।)

सम्यक् सुप्रभातस्वरूप पूज्य गुरुदेवश्रीका
मंगल आशीर्वाद

यहाँ तो सदा सुप्रभात ही है।

सम्यक्दर्शन सुप्रभात है। केवलज्ञानकी जगमगाती ज्योतिको सुप्रभात कहते हैं। अतीन्द्रिय आनंदके ध्रौव्य प्रवाहको रागरहित अतीन्द्रिय आनंदके स्वादपूर्वक जानना वह वास्तविक सुप्रभात है। तुम सब भगवान हो और भगवान बन जाओ, विराधक तो न रहो, परन्तु साधक भी न रहो, परिपूर्ण परमात्मा बन जाओ। यह सीमंधरनाथका संदेश है, अनंत तीर्थंकरोंका संदेश है। 'भविष्यकी कालावलि आत्मतत्त्वके अनुभवनमें ही बीते।'

*

मंगल सुप्रभातस्वरूप पूज्य बहिनश्री चंपाबेनका
मंगल आशीर्वाद

मुमुक्षु : आजके मंगल सुप्रभातके दिन ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि हमारे जीवनमें भी सुप्रभात प्रकटे।

पूज्य बहिनश्री चंपाबेन : अंतरकी सच्ची भावना हो और पुरुषार्थ करे तो सुप्रभात प्रकट हुए बिना रहता ही नहीं। अन्तरमें अँधेरा है ही नहीं। जगतमें रातके बाद प्रभात व प्रभातके बाद रात आती ही है, पर यह तो भगवान चैतन्यदेव! जिसमें अंधेरा है ही नहीं। यहाँ तो रात होती ही नहीं। आत्मा तो सुप्रभातस्वरूप ही है। सुप्रभात क्या? जगमगाता सूर्य आत्मा है। जीवने भ्रमसे अंधेरा मान लिया है। स्वानुभूति करे तो अंदर तो सुप्रभात ही है। पुरुषार्थ करके स्वानुभूति प्रकट कर। तुझे सच्चा सुख होगा।

स्वानुभूति प्रकट हो वह व्यक्त सुप्रभात है। फिर विशेष निर्मल पर्याय प्रकटे वह जगमगाते सूर्यका अधिक अधिक प्रकाश है। पुरुषार्थ करके श्रद्धा बदल, अनुभूति बदल; सच्चा पुरुषार्थ कर तो जरूर सुप्रभात प्रकट होगा ही। करना तो स्वयंको ही पड़ेगा। स्वानुभूति वह सुप्रभात और केवलज्ञान वह सम्पूर्ण जगमगाते सूर्यका उत्कृष्ट प्रकाश है। यह तो पर्याय अपेक्षासे बात है; बाकी तो स्वयं जगमगाता सूर्य ही है। ज्ञानप्रकाशका पुंज उसका नाम आत्मा है। वहाँ अंधेरा कहाँ है? उसीका अनुभव करना वही जीवनमें एक करने जैसा है। वही सुप्रभात है।

आत्मधर्म

गुरुकृपामृत अध्यात्म मेघ, वर्षे स्वर्णपुरीमें सदा।
सीमंधर-गुरु-कहान वाणी, ले आया 'आत्मधर्म' अहा!!

नवम्बर २०१२] ❀ अंक-३ ❀ [७५] ❀ [वर्ष-७

स्वाध्यायमंदिर भक्ति

सं. १९९४(ई.स. १९३०)में सुवर्णपुरीमें श्री जैन स्वाध्यायमंदिरकी मंगल स्थापना हुई। उद्घाटनके समय आलेमें पूज्य गुरुदेवश्रीकी उपस्थितिमें पूज्य बहिनश्री चंपाबेनके पवित्र करकमलोंसे जिनवाणी श्री समयसारजी बिराजित की गई। उस समय जो भक्तिगान हुआ था। आज स्वाध्यायमंदिरके ७५वें हीरक जयंती महोत्सव पर वही भक्ति उल्लास सह प्रस्तुत कर रहे हैं।

सुरेन्द्र आवो गगनके स्वाध्यायमंदिर उतरो,
भगवान श्री कुंदकुंदके जयनाद बोलो जगतमें,
भगवान श्री गुरुराज के जयनाद बोलो जगतमें....१

गुरुराज आप पधारते स्वाध्याय द्वार खूल गया,
कुंदकुंद-कृत समयसारका, जयनाद गाजे जगतमें....२

माँ तू हमारी सरस्वती, स्थापन करूँ मैं आपका,
क्या क्या करूँ स्तुतिगान, तू जीवनदात्री भगवती....३

सत्य वस्तु मार्गदर्शक शासनके हो सिंहकेसरी,
कुंदकुंदकृत प्राभृतत्रयी, सरिता बहाई राजवी....४

दुंदुभि नाद गजानेको, स्वर्गसंगीत लावजो,
आवो गवैये स्वर्गके सुवर्णके मैदानमें....५

आवजो, सब आवजो समयसारजी गुणगानमें,
लेकर साथ मिलकर भावसे, जयकार हो गुरुराजका....६

हितोपदेशक

जीवनके प्रसंग

(इस स्तंभ अंतर्गत हितकारक जीवन प्रसंग बताकर उसमें क्या हितकारक उपदेश है, यह बताया है।)

कहनेवाले मेरे शरीरको क्षुल्लक ब्रह्मचारी धर्मदास कहते है, वही मैं, मुझे स्वात्मानुभवकी प्राप्ति हुई उसे प्रकट करता हूँ। मेरे निमित्तसे मेरे शरीरका जन्म तो सवाई जयपुर राज्यमें जिला सवाई माधौपुर तालुका बोग्ली गाँव बपुईका है। खण्डेलवाल गधिया कुलमें श्रावक गोत्री गिरधरलाल चुडीवालके यहाँ मेरा शरीर जन्मा है। शरीरके पिताका नाम श्रीलाला और माताका नाम ज्वालाबाई था। मेरे शरीरका नाम धन्नालाल था। अब मेरे शरीरका नाम क्षुल्लक धर्मदास है। जब मेरे शरीरकी उम्र २० वर्षकी हुई तब निमित्त पाकर मैं झालरापाटन आया। वहाँ जैन नग्न मुनि श्री सिद्धश्रेणिजी थे। उनका मैं शिष्य हो गया। स्वामीजीने मुझे लौकिक व्रत नियम दिये। सो मैंने संवत १९२२से लेकर संवत १९३५के वर्ष पर्यंत कायक्लेश तप किया। अर्थात् १३ वर्षके भीतर मैंने २००० निर्जल उपवास किये, दो-चार जैनमंदिर बनवाये, प्रतिष्ठाएँ करवाई तथा सम्मेदशिखर, गिरनार आदि जैन तीर्थोंकी वन्दना की और भी भूशयन, पठन-पाठन मन्त्रादिक बहुत किया। उससे मेरे अन्तःकरणमें अभिमान अहंकाररूपी सर्पका जहर व्याप्त हो गया; इसलिए मैं स्वयंको अच्छा-भला मानता था तथा अन्यको झूठा, खोटा, बुरा मानता था। उसी बहिरात्मदशामें दिल्ली, अलीगढ और कोयली आदि बड़े शहरोंके तेरापन्थी श्रावक मेरे पैरोंकी प्रणाम विनय पूजा करते थे। इस कारण मेरे अन्तःकरणमें ऐसा अभिमान अज्ञान था कि मैं भला हूँ, श्रेष्ठ हूँ अर्थात् उस समय मुझे यह निश्चय नहीं था कि निन्दा, स्तुति, पूजा, देहकी और नामकी है। पश्चात् भ्रमण करते हुए मैंने बाराड़ देशके अमरावती शहरमें जाकर चातुर्मास किया था तथा चातुर्मासमें श्रावक मण्डलीको राग-द्वेषका उपदेश दिया करता था कि अमुक भला है और अमुक बुरा है।

एक बार कुंजीलाल सिंधईने मुझसे कहा कि आप किसको भला बुरा कहते हो-जानते हो। सब पदार्थ अपने-अपने स्वभावको लिए हुए स्वभावमें जैसै हैं वैसे ही है। सर्वप्रथम अपनेको समझो। इस प्रकार कुंजीलालजी सिंधईने मुझसे कहा तो भी मुझे मेरे भीतर स्वानुभव अन्तरात्मदृष्टि नहीं हुई। निमित्त पाकर कारंजा शहरके पट्टाधीश श्रीमत् देवेन्द्रकीर्तिजी भट्टारकजी महाराजसे मैं मिला। उस समय महाराजके शरीरकी आयु ९५ वर्ष प्रमाण थी। स्वामीजीने मुझसे कहा-तुम्हें सिद्धपूजा पाठ आता है कि नहीं? मैने कहा आता है। तब स्वामीजी बोले कि

(शेष देखे पृष्ठ १३ पर)

स्वतत्त्वकी स्वीकृति द्वारा ज्ञानज्योतिरूप दीपक प्रज्वलित करो

(दि. १३-११-१२को भगवान महावीरस्वामीका निर्वाण कल्याणक महोत्सवकी सभी मुमुक्षुओंको अतीव प्रसन्नता है। पूज्य गुरुदेवश्री व पूज्य बहिनश्री इस उत्सवको अति उल्लासपूर्ण मनाते थे, साथमें भक्तगण तो उनके दसानुदासत्वरूप समर्पणभावसे यह पर्व अति उल्लाससे मनाते थे। उन दिनों पूज्य गुरुदेवश्री इस सम्बन्धमें कुछ भावात्मक पुरुषार्थप्रेरक बात कहते थे। उसके इन्तझारमें प्रत्येक मुमुक्षुगुण सुबह-सुबह ही चातकवत् इन्तझार करते थे। उस दिन सम्बन्धित वीर नि. सं. २५०१ का यह प्रवचन यहाँ दिया जाता है।)

अहा ! आजसे करीब २५०० वर्ष पूर्व, कार्तिक कृष्णा १४की पिछली रात्रिमें चार अघाति कर्मोंका नाश करके अरिहंत भगवान महावीर, सिद्ध परमात्मदशाको प्राप्त हुए। केवलज्ञान हुआ तभी भगवानको भावमोक्ष तो प्रकट हो गया था; आज सकल कर्मकलंक रहित परम श्रीरूपी मुक्ति-कामिनीके वल्लभ हुए।

अहा ! वस्तुका स्वरूप तो देखो ! जिस काल भगवान महावीर निर्वाणको प्राप्त हुए उसी काल वे लोकाग्रमें बिराजमान हो गये ! जिस समय निर्वाण, उसी समय लोकके असंख्य प्रदेशोंका उल्लंघन और उसी समय लोकाग्रमें स्थिति ! समय एक घटनाएँ तीन ! भगवानने केवलज्ञानमें देखा है, इसलिए ऐसा है, यह बात नहीं है; किन्तु वस्तुका ही ऐसा गहन स्वरूप है और जैसा स्वरूप है, वैसा ही भगवानने देखा जाना है।

देखो तो सही ! एक क्रियावतीशक्तिका कितना सामर्थ्य है। समय एक और घटनाएँ तीन !! ऐसी तो अनंतशक्तियाँ तुझमें भरी पड़ी हैं, लेकिन तुझे उनका विश्वास कहाँ है ? एकबार जब तुझे अपने अनंतशक्तिके नाथ परमात्माकी महिमा आये विश्वास आये, तभी दीपावली पर्वको यथार्थरूपमें मनाया कहा जाएगा और तभी तेरे आत्मामें वैसी दीपावली प्रकट होगी। आजके दिन महावीर भगवान सिद्ध परमात्मदशाको प्राप्त हुए थे। देखो जीवके वीर्यकी दशा ! ऋषभदेव भगवानके समवसरणमें (मारिचिके रूपमें) होनेपर भी विपरीत पुरुषार्थसे असंख्य अरबों वर्ष तक अनेक कुगतियोंमें भटके और पूर्वके दसवें भवमें हिरनको मारते समय मुनिराजके दर्शन

एवं उपदेशसे भवान्तकारी निर्मल परिणतिको प्राप्त हुए। मारीचिके भवमें साक्षात् भगवानकी दिव्यध्वनिका श्रवण करने पर भी अपने आत्माकी पहचान न कर सके और सिंह जैसी क्रूर हिंसक तिर्यंचदशामें आत्मदर्शनको प्राप्त हो गये !...वहाँ भी उपादानकारणकी ही सिद्धि हुई। साक्षात् दिव्यध्वनि, मनुष्यपर्याय तथा राजपाटका त्याग ऐसा सब होने पर भी सम्यग्दर्शन प्राप्त न कर सके और तिर्यंचगति, हिंसाके परिणाम और जिसमें मनुष्योंकी भाषा समझना भी कठिन है; ऐसी स्थितिमें आत्मा और रागकी भिन्नताका भान कर लिया। अनंतशक्तिका धारक आत्मतत्त्व सदैव विद्यमान है। आत्मा पुरुषार्थस्वभावी ही है; उसीका स्वीकार आया, कि वह प्रत्यक्ष हो गया। अहो ! जीवके पुरुषार्थकी बलिहारी है।

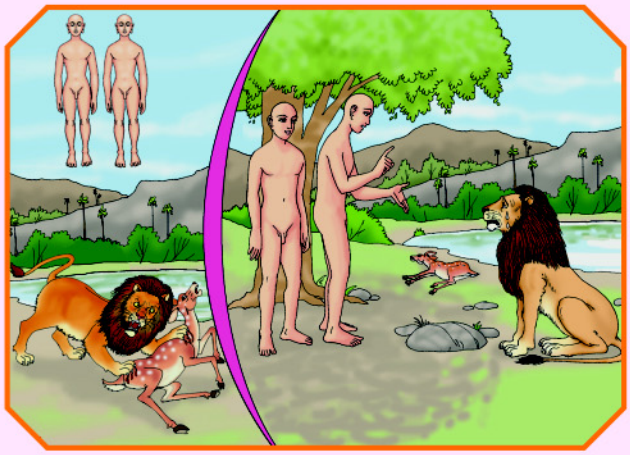

अहा ! मुनिराजने किस भाषामें उपदेश दिया होगा ? सिंहने वह भाषा कैसे समझी होगी ? आकाशमार्गसे गमन करते हुए दो मुनिराज सिंहको उपदेश देनेके लिए नीचे उतरे हैं और सिंह वह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित होता है कि अरे ! मुझसे तो सब दूर भागते है और यह निर्भयतासे मेरी ओर आ रहे हैं।... यह क्या ? ऐसे विस्मयमें सिंह पड़ा हुआ है; इतनेमें मुनिराज निकट आकर कहते हैं कि अरे सिंह ! दसवें भवमें तो तूँ चौबीसीका अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर होने वाला है; यह क्रूर हिंसाके परिणाम तुझे शोभा नहीं देते ! हे सिंह ! तिर्यंचगति तू नहीं है, यह तुझमें नहीं, किन्तु ज्ञानानंदमय चैतन्यप्रभु है, अनिमेष दृष्टिके उत्सुकतापूर्वक सुनते हुए सिंहकी आत्मवृत्ति जाग्रत हो उठी और आँखोंसे पश्चात्तापके आँसू बहने लगे। एक क्षण पहलेका क्रूर जीव, आश्चर्यकारी सरलभावसे विचारमें पड़ गया, कि मैं परमेश्वर हूँ और उल्लसित वीर्यसे अंतरकी गहराईमें उतर गया, कि अंतर्मुख होने पर मुनिराज द्वारा कहे गये अपने स्वरूपकी अनुभूति हुई.... अहा ! एक क्षण पूर्वका मांसाहारी हिंसक प्राणी धर्मात्मा ज्ञानी बन गया। यही वीतरागी जैनधर्मकी वस्तुस्वभावकी महानता है, कि पहले क्षणका पापी दूसरे क्षण आत्मदर्शी बन जाता है, क्योंकि उसमें उसका परमेश्वरतत्त्व विद्यमान है न ? भाई ! एकबार पलटकर ऐसे परमेश्वरतत्त्वकी महिमा तो ला, तुझे परमेश्वरताका प्रकटरूप अनुभव होगा।

आज ऐसे भगवान महावीरका निर्वाण दिवस है।

प्रभावना केन्द्र - स्वाध्यायमंदिर

पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन व साधना हेतु ७५ वर्ष पूर्व बनाया गया 'स्वाध्यायमंदिर' जिसका नामकरण भी पूज्य गुरुदेवश्रीकी कृपाका फल है। उसका दि. १५-११-२०१२ से दि. १७-११-२०१२ तक पूज्य गुरुदेवश्रीके सर्वप्रथम आयतनका, हीरक महोत्सव श्रीमती अरूणाबेन सुरेशभाई तुरखीया(शाह) परिवारकी ओरसे उत्साहसे मनाया जाएगा। उस दिनकी स्मृतिके रूपमें यहाँ स्वाध्यायमंदिरका पूर्व इतिहास दिया जा रहा है।

पूज्य गुरुदेवश्रीका जीवन एवं उनका सदुपदेश प्रथमसे ही अध्यात्मतत्त्वसे ओतप्रोत था। वे, उनके हृदयमें गहरे उतरे हुए तीर्थंकरदेवके वचनामृत, मुमुक्षु श्रोताओंको प्रवचनमें परोसते और उन्हें निहाल करते। इससे जिज्ञासुओंका प्रवाह सोनगढ़की ओर बढ़ता जा रहा था। 'परिवर्तन' स्थल 'स्टार ऑफ इंडिया'में जगह कम पड़ने लगी। ज्यादा श्रोता हो जाए, तब प्रवचन रखनेमें कठिनाई होती थी। पर्युषणमें तो पहलेसे ही दूसरे स्थान पर प्रवचन रखते थे। इस तरह वहाँ उस मकानमें लोग नहीं समाते थे। इसलिए भक्तोंने वि. सं. १९९४ (ई.स. १९३८)में पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन, उनके ज्ञानध्यान एवं निवास हेतु साधनातीर्थ ''श्री जैन स्वाध्यायमंदिर''का नवनिर्माण किया। अहा! क्या उसकी भव्यता! दूरसे देखनेवालेको जैसे समुद्रमें तैरता हुआ जहाज ही न हो! ऐसा लगता था। अहो! क्या उसका आनंदकारी मंगल उद्घाटन अवसर!

इस भव्यप्रसंग पर भक्तोंको कोई अद्भुत आनंदोल्लास था। स्वाध्यायमंदिरकी शोभा-सजावट

बहुत सुंदर करनेमें आई थी। उद्घाटनके पहलेसे ही भक्तजन गीत गाते गाते प्रभातफेरीके रूपमें स्वाध्यायमंदिर आते और समयसारके ताकके पास बैठकर बहुत भक्तिभावसे 'जय समयसार, जय समयसार' ये भक्तिगीत गाते थे। उद्घाटनके दिन (गुजराती) वैशाख कृष्णा अष्टमी, रविवार सुबहमें मुमुक्षुसंघ स्वाध्यायमंदिरमें पधारनेके लिए पूज्य

गुरुदेवश्रीको बाद्यघोषके साथ शोभायात्रापूर्वक 'स्टार ऑफ इंडिया' लेने गए। वहाँसे शोभायात्रापूर्वक आते हुए पूज्य बहिनश्री चंपाबहिनके घरके पास बहिनोंका समूह, पूज्य बहिनश्रीके हाथमें प्रतिष्ठेय 'समयसार' चांदीके थालमें बिराजित करके शोभायात्रामें सम्मलित हुआ। सर्वप्रथम मांगलिकपूर्वक स्वाध्यायमंदिरका उद्घाटन श्री नानचंदभाई खाराके हाथों हुआ। फिर प्रवचनकक्षके भव्य ताकमें पूज्य गुरुदेवश्रीकी कृपारूप आज्ञासे पूज्य बहिनश्री चंपाबेनके पवित्र करकमल द्वारा 'समयसार'की भव्य प्रतिष्ठा हुई।

उस आनंदकारी प्रसंग पर प्रवचन देते हुए पूज्य गुरुदेवश्रीके अंतरमें अति उल्लास आ जाने पर उन्होंने अंतरके भक्तिभीगे अहोभावसे कहा ''समयसार भरतक्षेत्रका सर्वोत्कृष्ट शास्त्र है। उसकी प्रत्येक गाथा 'मोक्ष दे' ऐसी अद्भुत है! भगवान

कुन्दकुन्दाचार्यदेवका हमारे पर बहुत उपकार है। ''हम तो उनके दासानुदास हैं'' फिर उन्होंने विशेषरूपसे दृढ़तापूर्वक कहा कि 'भगवान कुन्दकुन्दाचार्यदेव महाविदेहक्षेत्रमें सर्वज्ञ वीतराग श्री सीमंधर भगवानके समवसरणमें गए थे। वहाँ आठ दिन रहे थे । इस विषयमें अणुमात्र भी शंका नहीं है।' श्री कुन्दकुन्दाचार्यके विदेहगमनके विषयमें उन्होंने अत्यंत दृढ़तापूर्वक भक्तिपूरित हृदयसे पुकार करके कहा 'कल्पना करना नहीं, ना कहना नहीं, यह बात ऐसी ही है, मानो तो भी ऐसी है, न मानो तो भी ऐसी ही है, यथातथ्य बात है अक्षरशः सत्य है, नजरों देखी प्रमाणसिद्ध है।' इस तरह उद्घाटनके प्रथम प्रवचनमें ही भगवान कुन्दकुन्दाचार्यदेवकी महिमाके संदर्भमें धर्मप्रभावनामें कारणभूत हो ऐसी गुप्त गंभीर बातका, पूज्य गुरुदेवश्रीने गहन संकेत किया। मानो सनातन सत्य स्वानुभूतिप्रधान वीतराग दिगंबर जैनधर्मकी पुनित प्रभावनाका स्तंभारोपण करते हों ऐसा कोई भव्य प्रसंग था।

उस समय पूज्य गुरुदेवश्रीको समयसारके प्रणेता भगवान श्री कुन्दकुन्दाचार्य-देवके प्रति अंतरमें बहुत भक्तिभाव उल्लसित हुआ। भक्तिभाव व्यक्त करनेके साथ दूसरा कोई गहन, गंभीर और गुप्तभावोंका संकेत भी पूज्य गुरुदेवश्रीने दिया था। उस ही दिन पवित्रात्मा चंपाबहिनको अंतरके अहोभावसे 'भगवती बहिनश्री' ऐसे बहुमानसूचक असाधारण विशेषणसे विभूषित किया था। तब ही से चंपाबहिन 'भगवती बहिनश्री चंपाबहिन' के विशेषणस्वरूप बहुमानवाचक नामसे मुमुक्षुसमाजमें प्रसिद्ध हुए। प्रतिष्ठा विधि ब्र. शीतलप्रसादजीने कराई थी।

'मेरा तत्त्व अस्तिरूपसे है' ऐसा प्रथम विकल्पसे जोर आता है, फिर विकल्प टूटकर अंतरमें भावना जोरदार होनेसे सहज जोर आता है। —पूज्य गुरुदेवश्री

ऋषभ स्तोत्र अपरनाम भक्तामर स्तोत्र पर पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन

[भगवान मानतुंगस्वामी (ई.स. ६७७के करीब) द्वारा भगवान आदिनाथको लक्ष्य करके उनके प्रति समर्पणभावमय भक्तिसे एक अद्‌भुत स्तोत्र बन गया है। उसमें ४८ कारिकाएँ है। यद्यपि भगवान आदिनाथकी स्तुति होने पर भी 'भक्तामर' शब्दसे यह स्तोत्र शुरु होता होनेसे, यह स्तोत्र 'भक्तामर स्तोत्र' नामसे प्रसिद्ध है। इस पर पूज्य गुरुदेवश्रीने प्रवचन किए है। वे यहाँ दिये जा रहे है।]

श्लोक–17

नित्योदयं दलितमोहमहांधकारम्
गम्यं व राहुवदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति,
विद्योतयज्जगदपूर्वशशांकबिम्बम्॥१८॥

अर्थ :–हे नाथ ! आपका अत्यंत कांतिवान मुखकमल, समस्त विश्वको प्रकाशित करनेवाला अपूर्व चन्द्रमा है वह चन्द्रसे भी अधिकतर है, क्योंकि चंद्रमाका उदय निरंतर रहता नहीं, परंतु आपका मुखचंद्र सदा उदित-उज्ज्वल ही रहता है, चन्द्रमा अंधकार नष्ट कर सकता है, परंतु मोहांधकारको नष्ट नहीं कर सकता है और आपका मुखचन्द्र तो दोनोंको नष्ट करनेवाला है। चन्द्रमाको राहु और मेघ दबा सकते हैं, परंतु आपके मुख चन्द्रको कोई कुछ नहीं कर सकता है।

तीर्थंकरके पुण्य भी अनुपम अजोड़ और उत्कृष्ट होते हैं।

आपने ज्ञानस्वभावकी सावधानीसे स्वयंका मोह अंधकारका नाश किया है, एवं दूसरे भव्यजीवोंके मोह अंधकारका नाश करनेमें निमित्त है। चंद्रके नीचे घट्ट बादल आवे तो चंद्र दीखे नहीं लेकिन आपका ज्ञानानंद स्वभाव खिला, पूर्ण विकासरूप हुआ वह कभी ढंकेगा नहीं। ऐसे आपके आत्माको और आपके शरीरको जगतके किसी पदार्थकी उपमा लागू नहीं पड़ती है।

देखो परमात्माकी दशा ! लाखों वर्ष केवलज्ञानदशामें शरीर सहित रहे फिर भी भगवानके आहार-पानी नहीं होते, जो ऐसा नहीं मानते हैं वे पुण्यको नहीं समझते–जहाँ संपूर्ण वीतरागता है, जो १८ दोष रहित हैं, जिनको अनंतवीर्य प्रकट हुआ है—उनको कहना कि वे आहार-

साधक जीव हैं, अंतरमें पूर्ण स्थिरता नहीं हो सकती, पूर्ण वीतराग नहीं हुए हैं, इसलिये अपवाद—शुभ बीचमें आता है—होता है; परन्तु ध्येय तो अन्तरंग स्थिरताका ही है । **—पूज्य गुरुदेवश्री**

पानी लेते हैं–तो उसे भगवानका निश्चय-व्यवहार स्वरूप ही मालूम नहीं। अर्हंतदेवका स्वरूप लोग अनेक प्रकारसे विकृत मानते हैं। जिसको वीतरागता और केवलज्ञान प्रकट हुआ है, उसे बाह्यमें परम औदारिक शरीर होगा उसे उपसर्ग नहीं होगा। वे जमीन पर चलते नहीं। यक्षके मंदिरमें या कुम्हारकी हाटमें उतरे–ऐसा जो माने वे वास्तविकता नहीं समझते हैं। सम्यग्दर्शन-ज्ञानके आराधक जीवके पुण्य भी अद्भुत होते हैं। वर्तमानमें तो ऐसे पुण्यवंत राजा भी दिखते नहीं। प्रजाके पाससे महसूल न लेवे, परंतु दानादि संपत्ति देवें ऐसे राजा दीखते नहीं तो फिर सर्वज्ञदेव और उनकी धर्म आभा वर्तमानमें कहाँसे दीखे ?

तीर्थंकरदेवके समवसरण(धर्मसभा)में सिंह और नाग सुनने आते हैं, इन्द्र और असंख्यदेव सुनने आते हैं। भगवानको केवलज्ञान प्राप्तिके पहले, जन्मके पहले माताके महल के पास रत्नोंकी हंमेशां वृष्टि होती है, उसी भाँति मुनिदशामें जिसके घर आहार लेने जाए वहाँ पंचाश्चर्य होते हैं। आकाशमेंसे देव (१) पुष्पवृष्टि करते हैं (२) रत्नोंकी वर्षा करते हैं, (३) देवदुंदुभि वाजिंत्र बजते हैं (४) महा उत्तम सुगंधी जलके छीटे होते हैं (५) देवलोग जयजयकार करते हैं, (६) 'अहो दानम्', 'महादानम्' ऐसा कहते हुए खुशी मनाते हैं।

ऐसे पुण्यकी जिसे खबर नहीं और केवलज्ञानी और उसके स्वरूपमें शंका करे उनको पवित्रता कैसी होती है वह मालूम नहीं, पुण्यके उत्कृष्ट स्वरूपकी भी श्रद्धा नहीं। तीर्थंकरके जन्मकालमें रत्न बरसते हैं। वे रत्न अलग ही तरहके होते हैं। श्री नेमिनाथ भगवानके जन्मके समय देवोंने अपार रत्न बरसाये थे। वे रत्न कोई व्यापारी जरासंघके पास ले जाता है। जरासंघ आश्चर्यसे देखते हुए पूछता है तो उत्तर मिला कि नेमिनाथ भगवानके जन्म समय रत्नवृष्टि हुई थी। जरासंघ मंत्रीको पूछता है, कि भक्तोंके भाग्यसे पुण्यवंतका जन्म हुआ, और रत्नवृष्टि हुई ? मेरेसे कृष्णादि आगे बढ़ गये ? मंत्री कहते हैं—हमे मालूम है पर आप नाराज होंगे, इसलिए नहीं कहते परंतु आप उसके तुल्य नहीं हो सके। इन्द्र और देवगण उनकी सहायमें है। जरासंघको ईर्ष्या होती है, कि मैं तीनखंडका स्वामी, हजारों देव सहायमें है और मेरे घर ऐसे रत्न नहीं ? देखो तीर्थंकरके जन्म-समयके ऐसे पुण्य होते हैं फिर केवलज्ञानकी क्या बात ?

धर्मसभानें आपकी मुद्रा एकरूप स्थिर होती है। विहार समय भी ऐसी ही रहती है। आपका केवलज्ञान स्वभावकी एकाग्रता द्वारा, मोहका नाश करके उत्पन्न होता है। आपने

(शेष देखे पृष्ठ १२ पर)

पंचमकालमें हुए हमारे धर्म पितामह

भगवान अनन्तवीर्य आचार्यदेव

भगवान अनन्तवीर्य नामक कई आचार्य दिगम्बर परम्परामें हुए हैं, उनमें भगवान अकलंकस्वामी रचित 'सिद्धिविनिश्चय'की बृहद् टीकाके रचयिता, भगवान आचार्य अनन्तवीर्य स्वयं अपने आपमें एक हैं। ऐसा बताया जाता है कि आप देवसेन पण्डितके गुरु व गौणसेन पण्ड़ितके शिष्य थे। फिर भी आपके गुरुका नाम 'रविभद्रजी' जान पड़ता है व आचार्य वादिराजजीके आप दादागुरु थे। आपने स्वयंने शायद अपने गुरुके नामसे ही स्वयंको 'रविन्द्रपादोपजीवी' बताया है। आप द्रविड संघके नन्दिगणके आचार्य थे, भगवान वादिराजजीने आपकी स्तुति करते हुए कहा है की 'आपके वचनरूपी अमृतदृष्टिसे जगतको चाटजानेवाला शून्यवादरूपी हूताशन शान्त हो गया था'। इतना ही नहीं आचार्यदेव वादिराजजीने आपको उस 'दीपशिखा समान' बताया है कि जिसमें अकलंक वाङ्मयका गूढ़ और अगाध अर्थ पद-पद पर प्रकाशित होता है।

आप न्यायशास्त्रके पारंगत और अनेक शास्त्रोंके मर्मज्ञ थे। आपकी 'सिद्धिविनिश्चय'की टीकासे ज्ञात होता है कि आपका दर्शन-शास्त्रीय अध्ययन बहुत ही व्यापक और सर्वतोमुखी था। आपको वैदिक संहिताओं, उपनिषद, उनके भाष्य एवं वार्ताको आदिका भी गहरा अध्ययन था। आप न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग, मीमांसा, चार्वाक, बौद्ध आदि अन्य मतोंके असाधारण पण्ड़ित थे।

भगवान अकलंकस्वामीके 'सिद्धिविनिश्चय'ग्रंथकी विस्तृत टीका लिखते समय आपके सामने आपसे पूर्व हुए 'वृद्ध अनन्तवीर्यजी' द्वारा लिखि प्राचीन व्याख्या भी होगी। आपने इस टीका ग्रंथमें मूल ग्रंथते अभिप्रायको विषदरूपसे पल्लवित किया है। बीच-बीचमें आपने प्रकरणगत अर्थको स्वरचित श्लोकोंमें भी व्यक्त किया है, जिससे इस ग्रंथके वाचकको गद्य-पद्यमय चम्पू-काव्य सा आनन्द आता है। इस ग्रंथमें कितने ही नय प्रमेयोंकी चर्चा है।

आपके दो ग्रंथ प्रसिद्ध है- (१) सिद्धि विनिश्चय टीका (२) प्रमाणसंग्रह भाष्य अपरनाम प्रमाणसंग्रहालङ्कार।

इतिहासकारोंके अनुसार आपका समय ई.स. ९७५ से १०२५ प्रतीत होता है। ❑

प्रश्न :—पुरुषार्थ किस गुणकी पर्याय है ?
उत्तर :— पुरुषार्थ वीर्यगुणकी पर्याय है । —पूज्य गुरुदेवश्री

भेदविज्ञानसे ज्ञात होता निज आत्माका एकत्व-विभक्त सर्वविशुद्धज्ञान स्वरूप

[समयसार शास्त्र एक अद्वितीय शास्त्र है, उसके विविध अधिकारोंमें सम्यग्दर्शनके विषयरूप आत्माके एकत्व-विभक्त ज्ञातास्वभावकी मुख्यतापूर्वक नौ तत्त्वोंका स्वरूप और अन्तमें उन नौ तत्त्वोंमें रहा एकत्वरूप-त्रिकाल पूर्ण ध्रुव-ज्ञायकस्वभाव दर्शाया गया है। ऐसा एकत्वरूप आत्मा वह परसे विभक्त सर्व विशुद्ध ज्ञानानंदमय-आदिरूप प्रत्येक समय देदीप्यमान रहता है–ऐसे उपसंहार स्वरूप गा. ३९० से ४०४ पर हुए पूज्य गुरुदेवश्रीके भाववाही प्रवचन यहाँ दिए जा रहे हैं।]

(अब तक आचार्यदेवने शास्त्र, शब्द, रूप, रंग, गंध, रस, स्पर्श, धर्म-अधर्म, आकाश, काल व राग-द्वेष आदिसे भेदज्ञान कराया अब 'ज्ञान'से आत्माका एकत्व करा रहे हैं।)

● गृहस्थपनेमें धर्मीको स्वभावकी निःशंकता

भरत चक्रवर्ती, पाँच पाँडव, रामचन्द्रजी, श्रेणिक राजा, सीताजी इत्यादिको गृहस्थपनेमें भी ऐसे ज्ञानस्वभावका यथार्थ भान था और इससे उन्हें प्रतिसमय आत्मस्वभावमें ज्ञानकी अभेदता बढ़ती जाती थी और विकारमें अटकना दूर होता जाता था; गृहस्थपनेमें राग होता था तथापि उन्हें आत्माकी रागके साथ एकता हो जाती होगी !'—ऐसी बिलकुल शंका नहीं होती थी। श्रेणिक राजा इस समय नरकके संयोगमें है, तथापि उनकी ऐसी ही दशा है। सभी सम्यग्दृष्टिओंकी ऐसी ही श्रद्धा होती है, जिसे ज्ञान और आत्माकी एकतामें शंका है वह मिथ्यादृष्टि है, क्योंकि उसे राग और संयोगोंके साथ एकताकी मान्यता बनी हुई है।

● परमें एकता वह अधर्म; स्वमें एकता वह धर्म

बाह्यमें शरीरादि जड़की क्रियासे अथवा अंतरके पुण्य परिणामसे जो धर्म मानता है वह जीव अपने ज्ञान(स्वभाव)को जड़के साथ और विकारके साथ एकता मानकर अधर्मका ही सेवन कर रहा है; और जिसने आत्मस्वभावमें ज्ञानकी एकता की है, उसने विकारसे और जड़से अपने ज्ञान(स्वभाव)को पृथक् किया है, वह जीव प्रतिक्षण अनंतानंत कालमें कभी न किया हुआ–ऐसा अपूर्व धर्म कर रहा है। स्वभावमें एकता करके रागरहित हुआ उसका ज्ञान स्वयं ही धर्म है वही सम्यक्त्व, ज्ञान और संयम है उसका नाम सर्वविशुद्ध ज्ञान है।

पूर्णतत्त्वका ज्ञान और प्रतीति यह कथन अस्तिसे है, और पर सम्बन्धी विकल्पोंसे लेकर शरीरादि सर्व वस्तुओंके रागका जिसमें अभाव है उसका नाम वैराग्य, वह कथन नास्तिसे है । —पूज्य गुरुदेवश्री

● आत्माके साथ शत्रुता कैसे दूर होती है ?

आचार्य भगवान कहते है कि, हे जीव ! तू परमें मत देख ! परसे गुण प्रगट होंगे ऐसा मानकर अपने आत्माका अनादर न कर ! तेरा आत्मा ही अनंत गुणका भंडार है, उसमें अपने ज्ञानकी एकता करके, उसके साथ जो अनंतकालसे शत्रुता चली आ रही है उसे छोड दे ! वही सच्ची क्षमा है। जिसने आत्मा और ज्ञानका पृथक्त्व मानकर विकारके साथ किंचित् भी एकत्व माना है अर्थात् संयोगोंसे ज्ञान होना माना है उसने संयोग और विकारके साथ दोस्ती (एकत्वबुद्धि) की है, और अपने आत्माके साथ बैर बांधा है; विकारका आदर और स्वभावका अनादर करके उस पर अनन्त क्रोध किया है, अपने आत्माका, महान अपराध और क्रोध दूर होकर सच्ची क्षमा कैसे प्रकट हो उसका उपाय यहाँ कहा है।

● मोक्ष और निगोद

अज्ञानी जीव पैसा खर्च करनेसे पुण्य और धर्म मनवाते हैं, और उसके फलमें स्वर्ग-मोक्ष मिलेगा–ऐसा कहते हैं; परन्तु ज्ञानी तो कहते हैं कि पैसा खर्च करनेके कारण तो पुण्य-पाप अथवा धर्म कुछ भी नहीं होता, क्यों कि वह तो जड़ है, आत्मा उसका कर्ता नहीं है। परन्तु 'मैं परका कर्ता हूँ, और मैंने पैसा खर्च किया है'—ऐसा मानकर और पुण्यसे धर्म मानकर मिथ्यात्वकी पुष्टि करके वह महापापी जीव निगोदमें जायेगा। देखो अज्ञानी पैसा खर्च करनेसे मोक्ष मना रहे हैं ! ज्ञानी कहते हैं कि, पैसेकी क्रियाका कर्ता मैं हूँ–ऐसा माननेवाला जीव मिथ्यात्वके कारण निगोदमें जायगा। ज्ञानी और अज्ञानीकी मान्यतामें ऐसा विरोध है। इस मान्यताके साथ धर्म-अधर्मका सम्बन्ध है।

पुण्यसे या जड़की क्रियासे आत्माका धर्म मानेगा वह जीव मिथ्यात्वके कारण निगोदमें जायेगा ऐसा कहा, वह कहीं डरानेके लिए नहीं कहा है, परन्तु पर्यायका स्वरूप समझाया है। जिसने आत्माके ज्ञानको स्वभावसे छुड़ाकर संयोगोंके साथ जोड़ा है उसके ज्ञानका परिणमन अनंता हीन हो जायेगा–उसीका नाम निगोद दशा है; उसकी ज्ञानशक्ति अत्यंत नष्ट हो गई इससे बाह्य निमित्तरूप भी मात्र एक स्पर्शेन्द्रियके अतिरिक्त दूसरी कोई इन्द्रियाँ नहीं होती।

शुभभावसे—रागसे आत्माकी निर्मल वीतरागी दशा प्रगट होगी—यह मान्यता तो कलंक है । —पूज्य गुरुदेवश्री

● ज्ञानस्वभावकी आराधना और विराधनाका फल

'मैं ज्ञाता साक्षीस्वरूप नहीं, किन्तु परका और विकारका कर्ता हूँ–इस प्रकार जिसने परका कर्तृत्व माना है और अपना ज्ञातास्वभाव नहीं माना–उस जीवकी मिथ्या मान्यतामें ऐसा आ जाता है, कि 'मेरा ज्ञातास्वभाव ढँक जाए' और 'मुझमें विकारके तथा परके कर्तृत्वके भावका विकास हो' ! इस मिथ्या मान्यताके कारण उस जीवका ज्ञान अंतिम सीमा तक ढँक जायेगा और वह एकेन्द्रिय होगा। अपने ज्ञानस्वभावकी विराधनाका यही फल है और जिसने अपने ज्ञाता-साक्षीस्वरूपको स्वीकार करके विकारकी और परके कर्तृत्वकी बुद्धिको उड़ा दिया है वह जीव प्रति समय अपने ज्ञातृत्वको बढ़ाता और रागादि भावोंको दूर करता हुआ अल्पकालमें केवलज्ञान प्राप्त करता है और साक्षात्रूपसे सम्पूर्ण ज्ञाता हो जाता है। अपने ज्ञानस्वभावकी आराधनाका यह फल है।

● ज्ञानका कार्य

कहीं आग लगी हो तो उसे आँख जानती है, लेकिन क्या करे ? क्या वह पदार्थोंमें बदल सकती है ? जिस प्रकार आँख पदार्थोंको जानती है लेकिन उसे बदल नहीं सकती; उसी प्रकार आत्माका ज्ञानस्वभाव है; आत्मा सबको जानता है लेकिन पर में वह क्या करे ? परको जाननेमें राग-द्वेष करना भी ज्ञानका(स्वाभाविक) कार्य नहीं है। ऐसे ज्ञानस्वरूपकी जिसे श्रद्धा है वह धर्मात्मा संयोग और रागादिका ज्ञाता ही है। पांडव आदि धर्मात्मा थे; जिस समय कुरुक्षेत्रका युद्ध हुआ उस समय अज्ञानियोंको तो बाह्य दृष्टिसे ऐसा ही दिखाई देता था, कि यह पांडव युद्ध और द्वेषके कर्ता है; परन्तु वास्तवमें तो उस समय भी वे धर्मात्मा स्वभावकी एकतासे च्युत होकर कही बाह्यमें नहीं गये थे, संयोगकी क्रियामें या रागमें उनका आत्मा नहीं था; किन्तु उनका आत्मा तो ज्ञानस्वभावकी एकताकी श्रद्धा करके प्रतिसमय उसीमें एकताकी वृद्धि ही करता था;–इसका नाम धर्म है। *(क्रमशः)*❑

(पृष्ठ ८ का शेष भाग)

केवलज्ञान और परम आनंददशा अंतर प्रभुत्वके आधारसे प्रकट की है। वह प्रकटरूप ऐसी की ऐसी ही रहती है। आपके मुखका प्रकाश हजारों चाँदनीके प्रकाश जैसा है। पुण्यके फलमें स्वर्गके देवोंको महान प्रभावंत शरीर होता है फिर भी आपके शरीरके पास वह प्रकाश कम पड़ता है। *(क्रमशः)*❑

(पृष्ठ २ का शेष भाग)

जयमालाके अन्तका श्लोक पढ़ो। तब मैंने श्लोक पढ़कर सुनाया–

विवर्ण विगन्ध विमान विलोभ। विमाय विकाय विशब्द विशोभ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह। प्रसिद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह॥

तब श्रीगुरुने मुझे कहा कि सिद्ध परमात्मा तो काला गोरा, लाल, हरा, शुक्ल आदि वर्ण रहित है, सुगन्ध, दुर्गन्ध रहित है, क्रोध, मान, माया, लोभ रहित है, पाँच प्रकारके शरीर रहित है तथा छहकाय रहित है, अशब्द है, आकुलता रहित है, वह सर्वत्र विशुद्ध प्रसिद्ध है। देखो ! वह परमात्मा दिखाई देता है कि नहीं दिखाई देता है। तब मैं स्वामीजीके श्रीमुखसे यह सुनकर चकित चित हो गया। स्वामीजी तो मेरे पाससे उठकर जिनमन्दिरमें चले गये तथा मैंने अपने मनमें बहुत विचार किया। वह प्रसिद्ध परमात्मा मुझे किसी स्थान पर, किसी द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव में दिखलाई दिया नहीं। मैंने विचार किया कि काला, पीला, लाल, हरा, धवल, काया, माया, छायासे अलग होकर भी सिद्ध प्रकट है, परन्तु मैं तो जिधर देखता हूँ उधर वर्ण-रंग कायादिक ही दिखाई देता है। वह प्रसिद्ध सिद्ध है सो तो मुझे क्यों दिखलाई देते नहीं–इत्यादि बहुत विचार किया। अनन्तर स्वामीजीसे मैंने कहा कि हे कृपानाथ ! वह प्रसिद्ध सिद्ध प्रकट है सो तो मुझे दिखलाई देता नहीं। तब स्वामीजी बोले कि जो अन्धा होता है उसे दिखलाई देता नहीं है। मैंने पुनः स्वामीजीसे प्रश्न नहीं किया, चुपचाप रहा। परन्तु जैसे कुत्तेके मस्तकमें कीट पैदा हो जावे वैसे ही मेरे चित्तमें भी भ्रान्तिसी पैदा हो गई। उसी भ्रांतिकी अवस्थामें ज्येष्ठ माहमें मैं सम्मेदशिखरजी गया। वहाँ भी पहाड़के ऊपर, नीचे वनमें उस प्रसिद्ध सिद्ध परमात्माको देखने लगा, तीन दिन तक देखता रहा परन्तु वहाँ भी प्रसिद्ध सिद्ध परमात्मा दिखलाई नहीं दिया। पश्चात् लौटकर १० माह बाद देवेन्द्रकीर्ति स्वामीजीके पास आया। स्वामीजीसे विनती की-हे प्रभो ! वह प्रसिद्ध सिद्ध परमात्मा प्रकट है, तो मुझे दिखता नहीं। आप कृपा कर दिखलाओ तब स्वामीजी बोले जो सबको देखता है उसीको देख, वह तू ही है इस प्रकार स्वामीजीने मेरे कानमें कही। यह सुनते ही मुझे मेरे भीतर अन्तरात्मदृष्टि हो गई।

हितोपदेश : अन्तरमें प्रकट शक्तिरूप ज्ञायकस्वभावकी महिमा आकर उसकी लगनपूर्वककी खोज ही वीतरागमार्गको सुझाती है, परन्तु इसके बिना शुभाशुभ क्रिया एवं भाव व जिनवाणीके ज्ञानका क्षयोपशम वीतरागमार्ग सुझानेमें तनिक भी कार्यकारी नहीं है।

❀

जिनका शरीर परम औदारिक है, जिनके ज्ञान-आनन्दादि समस्त शक्तियाँ पूर्ण विकसित होगई हैं, ऐसे त्रिलोकीनाथ जिनेश्वरदेव परमात्माके शरीरसे वाणी भी परम-अमृत समान निकलती है । **—पूज्य गुरुदेवश्री**

(टाईटल ३ का शेष भाग)

अहा ! जो एकसमयकी पर्यायमें समस्त द्रव्य, गुण और पर्याय तथा भूत-वर्तमान-भविष्य तीनों कालकी अवस्थाओंको वर्तमानवत् साक्षात् प्रत्यक्ष जानते हैं वे सर्वज्ञदेव हैं। भाई ! कैसी होगी वह दशा ! और कैसी होगी उनकी वाणीकी महिमा ? भविष्यका अंत नहीं है और भूतकी आदि नहीं है; दोनोंको वर्तमानवत् प्रत्यक्ष देखते हैं। भविष्यकी पर्याय होगी तब ज्ञानमें ज्ञात होगी ऐसा नहीं, किन्तु वर्तमान ज्ञानकी पर्यायमें भविष्यको भी प्रत्यक्ष जानते हैं। उसकी महिमा जिसे लगे उसे चैतन्यकी महिमा जागृत होनेमें उनका निमित्तपना होता है। अरिहंतके चैतन्यकी महिमा अपने चैतन्यकी महिमा करा देती है–ऐसा नहीं है; परन्तु स्वयं अपने चैतन्यकी महिमाके भावरूप परिणमे तो उसे निमित्त कहा जाता है।

गुरुकी वाणी—कुन्दकुन्दाचार्य, अमृतचन्द्राचार्य, पूज्यपादस्वामी आदि कि जिन्हें आत्माकी पर्यायमें प्रचुर अतीन्द्रिय आनन्दकी मुहर–छाप लग गई है ऐसे निर्ग्रन्थ गुरुकी वाणी—स्वरूप समझनेमें निमित्त है। यों तो देव-शास्त्र-गुरु तीनों निमित्त कहे जाते हैं; परन्तु यहाँ तो वाणीकी प्रधानता है ना ? इसलिये देव-गुरुकी वाणी और देव-शास्त्र-गुरुकी महिमा आत्मस्वरूपकी जागृति होनेमें निमित्तरूप कहे हैं।

अरे ! वह वाणी भी कैसी कि जो एकसाथ तीनकाल और तीनलोककी बात करे, केवलज्ञानकी बात करे ! भाषाकी पर्यायमें केवलज्ञान नहीं है तथापि वह बात करती है केवलज्ञानकी। सर्वज्ञ परमात्माके श्रीमुखसे ॐकारध्वनि खिरे और उसकी जिसे महिमा आये उसे वह स्वरूप समझनेमें निमित्त होती है। जिनवाणीकी महिमा किसे कहते हैं ? श्रीमद् राजचन्द्र कहते हैं कि—

'उपमा आप्यानी जेने तमा राखवी ते व्यर्थ, आपवाथी निज मति मपाई में मानी छे;
अहो, राजचन्द्र, बाळ ख्याल नथी पामता अे, जिनेश्वर तणी वाणी जाणी तेणे जाणी छे।'

अहा ! वीतरागकी वाणी वह क्या वस्तु है ! ॐकारध्वनि निकली और गणधरोंने शास्त्र रचे।

'मुख औंकार धुनि सुनि, अर्थ गणधर विचारै;
रचि आगम उपदेशे, भविक जीव संशय निवारै।'

(ज्ञायक)जानने योग्य वस्तु है, उसे जानता है, परन्तु ज्ञातारूप भावका कर्त्ता परवस्तु नहीं है । —पूज्य गुरुदेवश्री

स्वभावके आश्रयसे स्वयं संशयका निवारण करे तो वाणीकी महिमाको निमित्त कहा जाता है। अहा ! अद्भुत बात है ! वाणी जड़ है, उसे खबर नहीं है कि स्वयं कौन है और साथमें जो सर्वज्ञ हैं वे कौन हैं; तथापि उस वाणीमें सर्वज्ञका स्वरूप आता है। अनंत–अनंत गुणोंसे भरपूर भगवान आत्मा ऐसा होता है; जिनको पूर्ण केवलज्ञान, पूर्ण केवलदर्शन और पूर्ण अतीन्द्रिय आनन्द प्रकट हुआ हो वे ऐसे होते हैं;–वह सब यह वाणी कहती है। जड़में स्व-परको जाननेकी शक्ति नहीं है परन्तु स्व-परकी कथा कहनेकी शक्ति है। जिसमें सर्वज्ञपना निमित्त है वह भाषापर्याय भी अद्भुत है। वह निमित्त है इसलिये निमित्तसे भाषा हुई है ऐसा नहीं है; (निमित्त)कुछ करता नहीं है इसीलिये निमित्त कहा जाता है ना ?

जिसे अंतरमें चैतन्यकी महिमा आये उसे देव-शास्त्र-गुरुकी महिमा निमित्त कही जाती है।

प्रश्न :— बाह्य साधन भी तो होना चाहिये ना ? क्या एकदम सीधी छलाँग मारनेसे आत्मप्राप्ति हो जायगी ?

उत्तर :— भाई, सुन तो सही ! भगवानकी वाणी ऐसा कहती है कि–अपने स्वभावको प्रगट करनेमें किसी अन्य वस्तुकी अपेक्षा नहीं है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र प्राप्त करनेके लिये किसी अन्य वस्तुकी–राग, निमित्त या देव-शास्त्र-गुरुकी–अपेक्षा नहीं है। अरे ! भेदकी भी अपेक्षा नहीं है। ऐसा कौन कहता है ?–वाणी। सूक्ष्म बातें हैं यह सब।

अहो ! देवकी महिमा ! गुरुकी महिमा ! गुरुको शरीरमें भीषण कुष्ठ रोग हो तथापि वे संत आनन्दमें हैं, रोगमें या रोगके विकल्पमें वे नहीं हैं। अहा ! ऐसी तो गुरुकी महिमा है ! उनकी वाणीकी महिमा भी अपार है ! वह वाणी ऐसा कहती है कि वस्तुका अनुभव वचनातीत है, विकल्पातीत है। ऐसी वाणीको शास्त्र कहा जाता है। श्रीमद्ने कहा है कि—

वचनामृत वीतरागनां परम शांतरस मूल;
औषध जे भवरोगनां, कायरने प्रतिकूल।
...रे गुणवन्ता ज्ञानी! अमृत वरस्यां रे पंचमकालमां।

वाणी आयी और अंतरमें अनन्त आनन्दकी वर्षा हुई...उस अतीन्द्रिय आनन्दकी बातें कही किसने ?–वाणीने।

सर्वार्थसिद्धिके देवकी अपेक्षा पंचम गुणस्थानवर्तीको आत्मामें से प्रकट हुई अतीन्द्रिय शान्ति अधिक है। छठवें गुणस्थानवर्तीको उससे भी अत्यधिक है।
—पूज्य गुरुदेवश्री

...'उसके गहरे संस्कार दृढ़ करनेमें'...

आत्माकी पर्यायमें चैतन्यकी महिमा जागृत करनेमें तथा गहरे संस्कार दृढ़ करनेमें देव-गुरुकी वाणी और देव-शास्त्र-गुरुकी महिमा निमित्तरूप है। अहा ! गहरे संस्कार दृढ़ करनेमें, ध्रुवतत्त्वको ग्रहण करनेमें, अंतरतलमें विराजमान आत्माको पकड़नेमें देव-गुरुकी वाणी और देव-शास्त्र-गुरुकी—महिमा स्वयं संस्कार डाले तो और पकड़े तो–निमित्त है। अहाहा ! एक-एक बोल अलौकिक है, यह कोई साधारण कथा नहीं है।

तीनलोकके नाथ जिनेन्द्रदेव, उनका केवलज्ञान, उनका आनन्द, गुरुकी साधक दशाका आनन्द और यह सब कहनेवाली चमत्कारी वाणी–ऐसे देव-गुरु-शास्त्र जो कि दिगम्बर संतोंके मार्गमें हैं–वह अन्यत्र कहाँ है ? दूसरे सम्प्रदायोंको दुःख होगा, परन्तु क्या किया जाय ? भाई ! दूसरोंके अनादरका प्रश्न नहीं है। यह तो सत्का उद्घाटन है, सत् ऐसा है भाई ! सत्को आँच नहीं लगाना, उसे निस्तेज नहीं करना।

...'तथा स्वरूप-प्राप्ति करनेमें निमित्त है।'

स्वरूपकी प्राप्तिमें ऐसे देव-गुरु और वाणीका निमित्तपना है; इनके सिवा अन्य देव-गुरु-शास्त्रका दृढ़ संस्कार तथा स्वरूपप्राप्तिमें निमित्तपना नहीं होता; तथापि निमित्त उपादानमें कुछ करता नहीं है। आत्मानन्दके अनुभवरूप कार्य परके कारण हो ऐसा वीतरागकी वाणी नहीं कहती। अहा ! देखो यह शास्त्र ! और देखो उस वाणीमें झरती चमत्कृति ! आत्मा स्वयं शुद्ध चैतन्यघन है, उसकी अनुभूतिका कारण वाणी आदि परद्रव्य नहीं हैं। ऐसा कौन कहता है ?–वाणी। वाणीमें–पुद्गलमें–निमित्तपना है। स्वामी कार्तिकेयानुप्रेक्षामें कहा है कि–पुद्गलकी शक्ति तो देखो, जोकि केवलज्ञानकी पर्यायको रोकती है !–यह बात व्यवहारसे निमित्तपने की है। जीव स्वयं अपनी विपरीतता या मंदताके कारण केवलज्ञानरूपसे–उत्कृष्टभावसे–नहीं परिणमता तब निमित्तमें निमित्तरूपसे उत्कृष्ट परिणमनकी सीमा कितनी होती है वह बतलाया है। चैतन्य महाप्रभुको केवलज्ञानकी उत्पत्तिके लिये परकी या पूर्व-पर्यायकी अपेक्षा नहीं है। जीव स्वयं एकसमयमें अपने षट्कारकरूपसे परिणमित होकर केवलज्ञान उत्पन्न करता है। उस वाणीको शास्त्र कहा जाता है। अपने चैतन्यकी महिमा प्रगट करे तो उसे निमित्त कहते हैं।

*

त्रैकालिक ध्रुव धरातल है; वही भूतार्थ है, सत्यार्थ है । जिसे धर्म करना है, उसे भूतार्थ द्रव्यपर दृष्टि करना चाहिये । —पूज्य गुरुदेवश्री

बाल-विभाग

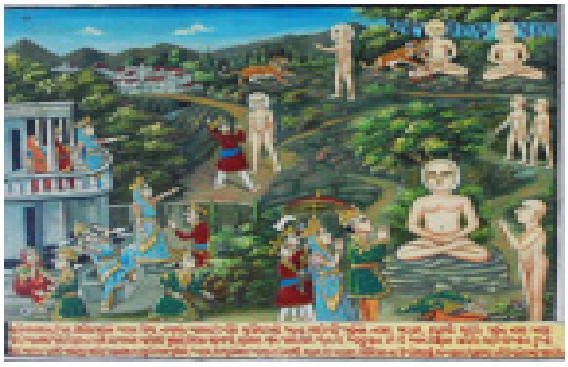

सुकोशल मुनिराज

(अब तक इस स्तंभ अंतर्गत श्री स्वाध्यायमंदिर, जिनमंदिर व तत्पश्चात् प्रवचनमंडपके चित्रोंमें पूज्य बहिनश्रीने वैराग्य व बोधप्रेरक जो चित्र पुराणोंके आधारसे, एवं स्वयंकी सूझ-बूझसे बनवाये थे; उनमेंसे प्रवचनमंडपके चित्रोंमें मुनिराजके जीवनको दर्शाया गया है। जब उपसर्ग तक भी प्राप्त हो जाय, उस समय भी मुनिराज अपने अन्तर आत्म-साधनाके पथको विशेष-विशेष उजागर करते रहते हैं—वह चित्रों द्वारा प्रदर्शित किया गया है। उसे यहाँ विस्तृत कथाके रूपमें पुराण आदिके आधारसे दिया जाता है।)

(प्रजा-वत्सल राजा कीर्तिधरको राहु विमान द्वारा नीलकान्तिसे आच्छादित सूर्यमंडल(सूर्यग्रहण)को देखकर वैराग्य हुआ। उन्होंने मुनिपद धारणकी भावनाको मंत्रियोंके सामने रखा, तो प्रथम तो मंत्रीओंने रोकनेका प्रयत्न किया। उनके न माननेसे मंत्रियोंने अपने पितानुसार पुत्रको राज्यका भार सोंपकर दीक्षा धारण करनेकी सलाह दी। सलाह अनुसार १५ दिनके पुत्रका नाम 'सुकोशल' रखकर उसे राज्य सोंपकर मुनिदीक्षा लेने तैयार हुए। जब वे मुनिराज आहार लेने पधारे तब उनकी गृहस्थदशाकी पत्नीने द्वेषभाव करते हुए मुनिको अपने नगरसे निकलवा दिया। इतना ही नहीं नगरके सभी मुनि भगवंतोंको उस नगरसे निकलवा दिया। यह देख सुकोशलकी धायमाताको बहुत रोते देख, सुकोशलने उनसे रोनेका कारण पूछा, तब धायमाता कहने लगी उससे आगे .....)

उस समय स्वामी कीर्तिधरने हमारा जो उपकार किया था वह स्मरणमें आते ही शरीर स्वतन्त्रतासे जलने लगता है। पापके उदयसे दुःखका पात्र बननेके लिए ही मेरा यह शरीर रुका हुआ है। जान पड़ता है, कि यह लोहेसे बना है, इसलिए तो स्वामीका वियोग होने पर भी स्थिर है। निर्ग्रन्थ मुनिको देखकर तुम्हारी बुद्धि वैराग्यमय न हो जाए इस भयसे तुम्हारी माताने नगरमें मुनियोंका प्रवेश रोक दिया गया है। परन्तु तुम्हारे कुलमें परम्परासे यह धर्म चला आया है, कि पुत्रको राज्य देकर तपोवनकी सेवा करना। तुम कभी घरसे बाहर नहीं निकले इसी कारण नीतिके जाननेवाले मन्त्रियोंने तुम्हारे भ्रमण आदिकी व्यवस्था इसी भवनमें कर रखी है। क्या, तुम मन्त्रियोंका इस निश्चयको नहीं जान पाये हो ?

तदनन्तर वसन्तलता धाय द्वारा निरूपित समस्त वृत्तान्त सुनकर सुकोशल शीघ्रतासे महलके अग्रभागमेंसे नीचे उतरा। और छत्र, चमर आदि राज-चिह्नोंको छोड़कर कमलके समान

चैतन्यदृष्टिवानको जब तक पूर्ण वीतरागता न हो तबतक व्यवहार आता है, परन्तु वह हेयरूपसे ज्ञेय है और भगवान आत्मा उपादेयरूपसे ज्ञेय है।-दोनोंमें इतना अन्तर है। —पूज्य गुरुदेवश्री

कोमल कान्तिको धारण करनेवाले पैरोंसे पैदल ही चल पड़ा। इस तरह परम उत्कण्ठासे युक्त सुकोशल राजकुमार पिताके समीप पहुँचा। इसके जो छत्र धारण करनेवाले आदि सेवक थे वे सब व्याकुल चित्त होते हुए हड़बड़ाकर उसके पीछे दौड़ते आये। जाते ही उसने प्रासुक विशाल तथा उत्तम शिलातल पर विराजमान अपने पिता कीर्तिधर मुनिराजकी तीन प्रदक्षिणाएँ दी। उस समय उसके नेत्र आँसुओंसे व्याप्त थे, और उसकी भावनाएँ अत्यन्त उत्तम थीं। उसने दोनों हाथ जोड़कर मस्तकसे लगाये तथा घुटनों और मस्तकसे पृथवीका स्पर्श कर बड़े स्नेहके साथ उन मुनिराजके चरणोंमें नमस्कार किया। वह हाथ जोड़कर मुनिराजके आगे बैठ गया। अपने घरसे मुनिराजका तिरस्कार होनेके कारण मानो लज्जाको प्राप्त हो रहा था। उसने मुनिराजसे कहा कि जिस प्रकार अग्निकी ज्वालाओंसे व्याप्त घरमें सोते हुए मनुष्योंको तीव्र गर्जनासे युक्त मेघोंका समूह जगा देता है उसी प्रकार जन्म-मरणरूपी अग्निसे प्रज्वलित इस संसाररूपी घरमें मैं मोहरूपी निद्रासे आलिङ्गित होकर सो रहा था सो हे प्रभो ! आपने मुझे जगाया है। आप प्रसन्न हूजिए तथा आपने स्वयं जिस दीक्षाको धारण किया है वह मेरे लिए भी दीजिए। हे भगवन् मुझे भी इस संसारके व्यसनरूपी संकटसे बाहर निकालिए। नीचेकी ओर मुख किये सुकोशल जब तक मुनिराजसे यह कह रहा था तब तक उसके समस्त सामन्त वहाँ आ पहुँचे। सुकोशलकी स्त्री विचित्रमाला भी गर्भके भारको धारण करती विषादभरी, अन्तःपुरके साथ वहाँ आ पहुँची। सुकोशलको दीक्षाके सन्मुख जानकर अन्तःपुरसे एक साथ भ्रमरकी झांकरके समान कोमल रोनेकी अवाज उठ पड़ी।

तदनन्तर सुकोशलने कहा कि 'यदि विचित्रमालाके गर्भमें पुत्र है तो उसके लिए मैंने राज्य दिया' इस प्रकार कहकर उसने निःस्पृह हो, आशारूपी पाशको छेदकर, स्नेहरूपी पंजरको जलाकर, स्त्रीरूपी बेड़ीको तोड़कर, राज्यको तृणके समान छोड़कर, अलंकारोंका त्याग कर अन्तरङ्ग बहिरङ्ग दोनों प्रकारके परिग्रहका उत्सर्ग कर, पर्यङ्कासनसे बैठकर, केशोंका लोंचकर पितासे महाव्रत धारण किए। और दृढ निश्चय हो शान्तचित्तसे पिताके साथ विहार करने लगा। जब वह विहारके योग्य पृथ्वी पर भ्रमण करता था तब पैरोंकी लाल-लाल किरणोंसे ऐसा जान पड़ता था मानों कमलोंका उपहार ही पृथ्वी पर चढ़ा रहा हो। लोग उसे आश्चर्यभरे नेत्रोंसे देखते थे।

मिथ्यादृष्टि तथा पाप करनेमें तत्पर रहनेवाली सहदेवी आर्तध्यानसे मरकर तिर्यंच योनिमें उत्पन्न हुई। तथा पिता-पुत्र आगमानुकूल विहार करते थे। विहार करते-करते जहाँ सूर्य अस्त

एक म्यानमें दो तलवारें नहीं रह सकतीं उसीप्रकार जिसे आत्माका रस है उसे रागादिका रस उड़ जाता है और जिसे रागादिका राग है उसे आत्माका रस नहीं आ सकता । —पूज्य गुरुदेवश्री

हो जाता था वे वहीं रह जाते थे। तदनन्तर दिशाओंको मलिन करता हुआ वर्षाकाल आ पहुँचा। काले-काले मेघोंके समूहसे आकाश ऐसा जान पड़ने लगा मानो गोबरसे लीपा गया हो। जिन पर भ्रमर गुञ्जार कर रहे थे ऐसी कदम्बकी बड़ी-बड़ी बोंडियाँ ऐसी जान पड़ती थी मानो वर्षाकालरूपी राजाका यशोगान ही कर रही हों। आकाशतलसे अखण्ड जलधारा बरस रही थी सो उससे ऐसा जान पड़ता था मानो आकाशतल पिघल-पिघल कर बह रहा हो और पृथिवीमें हरी-हरी घास उग रही थी उससे ऐसा जान पड़ता था मानो उसने संतोषसे घासरूपी कञ्चुक (चोली) ही पहिन रक्खी हो। जिस प्रकार अतिशय दुष्ट मनुष्यका चित्त ऊँचनीच सबको समान कर देता है उसी प्रकार वेगसे बहनेवाले जलके पूरने ऊँची-नीची समस्त भूमिको समान कर दिया था। बिजलीका तेज जल्दी-जल्दी समस्त दिशाओंमें घूम रहा था। उससे ऐसा जान पड़ता था मानो आकाशका नेत्र 'कौन देश जलसे भरा गया और कौन देश नहीं भरा गया' इस बातको देख रहा था। अनेक प्रकारके तेजको धारण करनेवाले इन्द्रधनुषसे आकाश ऐसा सुशोभित हो गया मानो अत्यन्त ऊँचे सुन्दर तोरणसे ही सुशोभित हो गया हो।

सदा (दया) अनुकम्पाके पालनमें तत्पर रहनेवाले दिगम्बर मुनिराज प्रासुक स्थान पाकर चातुर्मास व्रतका नियम लिए हुए थे। जो शक्तिके अनुसार नाना प्रकारके व्रत-नियम-आदि धारण करते थे, तथा सदा साधुओंकी सेवामें तत्पर रहते थे ऐसे श्रावकोंने दिग्व्रत धारण कर रखा था। इस प्रकार मेघोंसे युक्त वर्षाकालके उपस्थित होने पर आगमानुकूल आचारको धारण करनेवाले दोनों पिता-पुत्र निर्ग्रंथ साधु कीर्तिधर मुनिराज और सुकोशल मुनिराज इच्छानुसार विहार करते हुए उस स्मशान भूमिमें आये जो वृक्षोंके अन्धकारसे गम्भीर था, अनेक सर्प आदि हिंसक जन्तुओंसे व्याप्त था, पहाड़की छोटी-छोटी शाखाओंसे दुर्गम था, भयङ्कर जीवोंको भी भय उत्पन्न करनेवाला था, काक, गीध, रीछ तथा श्रृगाल आदिके शब्दोंसे जिसके गर्त भर रहे थे, जहाँ अधजले मुरदे पड़े हुए थे, जो भयङ्कर था, जहाँकी भूमि ऊँची-नीची थी, जहाँ चर्बीकी अत्यन्त सड़ी बाससे तीक्ष्ण वायु बड़े वेगसे बह रही थी, जो अट्टहाससे युक्त घूमते हुए भयङ्कर राक्षस और वेतालोंसे युक्त था तथा जहाँ तृणोंके समूह और लताओंके जालसे बड़े-बड़े वृक्ष परिणद्ध-व्याप्त थे। ऐसे विशाल स्मशानमें एक साथ विहार करते हुए तपरूपी धनके धारक उज्ज्वल मनसे युक्त धीरवीर पितापुत्र—दोनों मुनिराज आषाढ सुदी पूर्णिमाको अनायास ही आ पहुँचे। सब

बाह्य सुविधाओंको—साफ-सुथरा गाँव, सुन्दर मकान, कान्तिमान शरीर, अच्छे कपड़े, कीमती गहने, प्रतिष्ठित परिवार, धन-धान्य यह सब स्मशानकी शोभा—देखकर उसकी महिमामें तू अपनी महिमा भूल गया है कि मैं कौन हूँ!—पूज्य गुरुदेवश्री

प्रकारकी स्पृहासे रहित दोनों मुनिराज, जहाँ पत्तोंके पड़नेसे पानी प्रासुक हो गया था ऐसे उस स्मशानमें एक वृक्षके नीचे चार मासका उपवास लेकर बिराजमान हो गये। वे दोनों मुनिराज कभी पर्यङ्कासनसे बिराजमान रहते थे, कभी कायोत्सर्ग धारण करते थे और कभी वीरासन आदि विविध आसनोंसे अवस्थित रहते थे। इस तरह उन्होंने वर्षाकाल व्यतीत किया। कार्तिकमासकी पूर्णिमा व्यतीत होने पर तपस्वीजन उन स्थानोंमें विहार करने लगे जिनमें भगवानके गर्भ जन्म आदि कल्याणक हुए थे तथा जहाँ लोक अनेक प्रकारकी प्रभावना करनेमें उद्यत थे।

अथानन्तर जिनका चातुर्मासोपवासका नियम पूर्ण हो गया था ऐसे वे दोनों मुनिराज आगमानुकूल गतिसे गमन करते हुए पारणाके निमित्त नगरमें जानेके लिए उद्यत हुए। उसी समय एक व्याघ्री जो पूर्वभवमें सुकोशलमुनिकी माता सहदेवी थी उन्हें देखकर क्रोधसे भर गई, उसकी खूनसे लाल-लाल दिखनेवाली बिखरी जटाएँ काँप रही थीं, उसका मुख दाढोंसे भयंकर था, पीले-पीले नेत्र चमक रहे थे, उसकी गोल पूँछ मस्तकसे ऊपर आकर लग रही थी, नखोंके द्वारा वह पृथिवीको खोद रही थी, गम्भीर हुंकार कर रही थी, ऐसी जान पड़ती थी मानो शरीरको धारण करनेवाली भारी ही हो, उसकी लाल-लाल जिह्वाका अग्रभाग लपलपा रहा था, वह देदीप्यमान शरीरको धारण कर रही थी और मध्याह्नके सूर्यके समान जान पड़ती थी। बहुत देर तक क्रीड़ा करनेके बाद उसने सुकोशलस्वामीको लक्ष्यकर ऊँची छलाङ्ग भरी। सुन्दर शोभाको धारण करनेवाले दोनों मुनिराज, उसे छलाङ्ग भरती देख 'यदि इस उपसर्गसे बचे तो आहार पानी ग्रहण करेंगे अन्यथा नहीं इस प्रकारकी सालम्ब प्रतिज्ञा लेकर निर्भय हो कायोत्सर्गसे खड़े हो गये। वह दयाहीन व्याघ्री सुकोशल मुनिके ऊपर पड़ी और नखोंके द्वारा उनके मस्तक आदि अङ्गोंको विदारती हुई पृथिवीपर आई। उसने उनके समस्त शरीरको चिर डाला। जिससे खूनकी धाराओंको छोड़ते हुए वे उस पहाड़के समान जान पड़ते थे जिससे गेरू आदि धातुओंसे मिश्रित पानीके निर्जर भर रहे हों। तदनन्तर वह पापिनी उनके सामने खड़ी होकर तथा नाना प्रकारकी चेष्टाएँ कर उन्हें पैरकी ओरसे खाने लगी। गौतमस्वामी राजा श्रेणिकसे कहते हैं कि है श्रेणिक ! मोहकी चेष्टा तो देखो जहाँ माता ही प्रिय पुत्रके शरीरको खाती है। इससे बढ़कर और क्या कष्टकी बात होगी कि दूसरे जन्मसे मोहित हो बान्धवजन ही अनर्थकारी शत्रुताको प्राप्त हो जाते हैं।

तदनन्तर मेरुके समान स्थिर और शुक्ल ध्यानको धारण करनेवाले सुकोशल मुनिको

शरीर छूटनेके पहले ही केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। सुर और असुरोंने इन्द्रके साथ आकर बड़े हर्षसे दिव्य पुष्पादि सम्पदाके द्वारा उनके शरीरकी पूजा की। सुकोशलके पिता कीर्तिधर मुनिराजने भी उस व्याघ्रीको मधुर शब्दोंसे सम्बोधा जिससे संन्यास ग्रहण कर वह स्वर्ग गई। तदनन्तर उसी समय कीर्तिधर मुनिराजको भी केवलज्ञान उत्पन्न हुआ सो महिमाको करनेवाले दोनोंकी वही यात्रा पिता और पुत्र दोनोंका केवलज्ञान महोत्सव करनेवाली हुई। सुर और असुर केवलज्ञानकी महिमा फैलाकर तथा दोनों केवलियोंको चरणोंको नमस्कार कर यथायोग्य अपने-अपने स्थान पर गये। गौतमस्वामी कहते हैं कि जो पुरुष सुकोशलस्वामीके माहात्म्यको पढ़ता है वह उपसर्गसे रहित हो चिरकाल तक सुखसे जीवित रहता है।

ऐसे सुकोशल मुनिराजको कोटि-कोटि वंदन व सुकोशल केवलीको अर्न्तहृदयसे वंदन करते है।

युवा-विभाग

[इस स्तंभ अंतर्गत पूज्य गुरुदेवश्रीकी प्रवचनसभामें उठाए गए प्रश्न व पूज्य गुरुदेवश्रीके द्वारा दिए गए उत्तर युवानोंकी रुचि हेतु दिए जा रहे हैं।]

प्रश्न :—(संसारसे) छूटनेका कोई मार्ग तो होना चाहिये ?

उत्तर :—यह छूटनेका रास्ता है कि चैतन्य आत्माको आत्मामेंसे परिणमित—रागादिकमेंसे नहीं जन्मी हुई—भावना ही छूटनेका मार्ग है |

आत्माको आत्मामेंसे परिणमित....भावना अवश्य फलती है।

प्रश्न :—'परिणमित' क्यों लिया ?

उत्तर :—मात्र कल्पना या ज्ञातृत्वकी धारणा कर रखी है ऐसा नहीं, किन्तु अपने अंतरमें उस प्रकारका परिणमन हुआ है | आत्मा ज्ञानानन्द है वैसी दशा हुई है, (मात्र) ज्ञातृत्व या धारणा रखकर बात नहीं की है |

'चैतन्यको चैतन्यमेंसे परिणमित भावना,'—शब्द थोड़े हैं किन्तु भाव बहुत ऊँचे हैं | चैतन्य किसे कहना ? तो कहते हैं कि परमानन्द एवं परम ज्ञानके पिण्डको—जो स्वभावसे अनादि-अनन्त है, अतीन्द्रिय सच्चिदानन्दमय द्रव्य है उस त्रैकालिक वस्तु को | अंतरमें जो आवरण रहित वस्तु है उसकी दृष्टिपूर्वक उसमेंसे परिणमित दशा अर्थात् सम्यग्दर्शन प्रकट करनेकी भावना यथार्थ हो तो वह अवश्य फलती ही है |

श्री दिगम्बर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ अंतर्गत

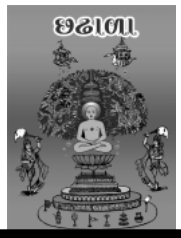

छढाला अध्ययन वर्ष

सौजन्य : मातुश्री ललिताबेन व्रजलाल शाह, परिवार, जलगांव

प्रश्नपत्र क्रमांक - ४ (कुल मार्कस–५०)

अभ्यासक्रम : छहढाला : चौथी ढाल

परीक्षार्थीका नाम: ..... उम्र वर्ष : .....

मंडलका नाम : .....गाँवका नाम : .....

फोन नंबर : ..... ता. २५-१०-२०१२

सूचना : (१) प्रश्नोंके उत्तर छढालाके आधार पर देने होंगे।

प्रश्नः १ (अ) निम्न पश्नोंमेंसे कोई भी छह प्रश्नोंके उत्तर पद्यके साथ लिखिये। (१२)

(१) सम्यग्ज्ञानका लक्षण क्या है ?

(२) सम्यक्दर्शन एवं सम्यग्ज्ञानमें क्या अंतर है ? सम्यग्ज्ञान कब होता है ?

(३) सम्यग्ज्ञानके भेद कितने है ? कौनसे है ?

(४) केवलज्ञानका स्वरूप एवं उसकी महिमा समजाईये।

(५) ज्ञानके दोष कौनसे है ? सम्यग्ज्ञान प्राप्त करनेके लिए आत्माको क्या करना चाहिए ?

(६) ज्ञानी एवं अज्ञानीके प्रयत्न(पुरुषार्थ)में क्या अंतर है ? अज्ञानी क्यों लेशमात्र सुख प्राप्त नहीं करता ?

(७) क्या मिलना सुलभ है ? और क्या मिलना दुर्लभ है ?

(८) सम्यग्ज्ञानसे क्या रुकता है ? उसकी महिमा क्या है ?

प्रश्न : २ निम्न दिये गये शब्दोंमेंसे छह शब्दोंके अर्थ अधिक से अधिक दो पंक्तिमें समझाईये। (१२)

(१) प्रत्यक्षज्ञान (२) परोक्षज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) स्वपरभेदविज्ञान (५) अणुव्रत

(६) सकलव्रत (७) शिक्षाव्रत (८) अनर्थदंडव्रत (९) अतिचार

प्रश्न : ३ नीचे दिये गये प्रश्नोंमेंसे किन्ही तीनके उत्तर अधिकसे अधिक पांच पंक्तिमें दीजिये। (१५)

(१) अणुव्रत कितने और कौनसे है ? उनका स्वरूप क्या है ? वे किसको होते है ?

(२) शिक्षाव्रतमें किसकी तालीम मिलती है ? उनके प्रकार बताईये।

(३) अनर्थदंडव्रतके प्रकार एवं उनका अर्थ समझाईये।

(४) गुणव्रत किसको कहते है ? और वे कितने हैं ?

(५) मृत्यु समय संन्यास कौन धर सकता है ? उससे क्या लाभ होता है ?

प्रश्न : ४ निम्न विषयोंमेंसे किसी एक विषय पर निबंध लिखिये।

(इस प्रश्नका उत्तर ज्यादासे ज्यादा बीस पंक्तिमें पूज्य गुरुदेवश्रीके सीडी प्रवचन एवं वीतराग-विज्ञान(छहढाला प्रवचन)के आधारसे दिजीये।) ११

(१) ''लाख बातकी बात यही निश्चय उर लावो'' उसका भाव पूज्य गुरुदेवश्री किस प्रकारसे समझाते है ?

(२) ज्ञानके दोषोंको पूज्य गुरुदेवश्री किस प्रकार समझाते है ?

(३) मनुष्यपर्यायकी दुर्लभता समझाईये, उसमें जीवका क्या कर्तव्य है ?

सुवर्णपुरी (सोनगढ़) समाचार—

स्वानुभवमुद्रित-अध्यात्मबोधदाता, परम-तारणहार, परमोपकारी पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामीके एवं तद्भक्त विशिष्टोपकारी, स्वानुभवविभूषित प्रशममूर्ति पूज्य बहिनश्री चम्पाबेनके धर्मोपकार-सुप्रतापसे, उन उभयकी पवित्र साधनास्थली अध्यात्मतीर्थ श्री सुवर्णपुरीमें, हमारे आदरणीय, गहरे आदर्श आत्मार्थी, पंडितरत्न श्री हिम्मतलालभाई जे० शाहके ज्ञान-वैराग्य-भक्तिभीगे मार्गदर्शनमें, शासनप्रभावनाके अंगरूप सब धार्मिक गतिविधि नियमित एवं सुचारु चल रही है।

❀ सुवर्णपुरीका दैनिक क्रम ❀

क्रमशः प्रातः ऑडियो टेप द्वारा पूज्य बहिनश्रीकी देवगुरुभक्ति एवं धर्मचर्चा, जिनेन्द्र-दर्शनपूजा, पूज्य गुरुदेवश्रीका परमागम श्री समयसार पर CD-प्रवचन; श्री समयसार पर शिक्षणवर्ग, अपराह्न श्री बहिनश्रीके वचनामृत पर CD-प्रवचन, पूज्य बहिनश्रीके चित्रपट समक्ष उपकृतभावभीगी स्तुति, जिनमन्दिरमें जिनेन्द्रभक्ति; सायं पूज्य गुरुदेवश्रीका श्री समयसार कलशटीका पर CD प्रवचन। यह कार्यक्रम नियमित चल रहा है।

❀ स्वाध्यायमंदिर पत्रिका लेखनविधि ❀

श्री जैन स्वाध्यायमंदिरके हीरक जयंती महोत्सवकी निमंत्रण पत्रिकाकी लेखनविधि ता. २१-१०-२०१२के दिन रखी गई थी। सुबह पूजनके बाद श्री नरेन्द्रभाई शाह जलगाँवके निवासस्थानसे गाजे-बाजेके साथे भक्तिसह निमंत्रण पत्रिकाको परमागममंदिरमें लाया गया। पूज्य गुरुदेवश्रीके समयसार शास्त्र पर हुए सीडी प्रवचनके बाद महोत्सव आयोजक श्री सुरेशभाई तुरखीया, घाटकोपर द्वारा पत्रिकाका वांचन हुआ। उसके बाद पत्रिकाका लेखन अनेक मुमुक्षुओंकी उपस्थितिमें सानंद संपन्न हुआ।

❀ विशेष धार्मिक कार्यक्रम ❀

हमारे परम तारणहार परमोपकारी पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजीस्वामीके वार्षिक समाधिदिन निमित्त सोनगढ़में पंचाह्निक विशेष धार्मिक कार्यक्रम, मार्गशीर्ष कृष्णा ३ ता. १-१२-२०१२, शनिवार से मार्गशीर्ष कृष्णा ७ ता. ५-१२-२०१२, बुधवार तक, रखा गया है। यह 'गुरु-उपकारस्मृति'का अवसर श्री पंचपरमेष्ठिमंडलविधानपूजा, जिनेन्द्र एवं गुरुभक्ति, पू. गुरुदेवश्रीके टेपप्रवचन इत्यादि अध्यात्म-ज्ञान-वैराग्य-भक्त्युपासनाप्रधान धार्मिक कार्यक्रम—प्रशममूर्ति भगवती पूज्य बहिनश्री चम्पाबहिन एवं आदरणीय पंडितरत्न श्री हिम्मतलालभाई जे० शाहके गुरु-भक्तिभीगे मार्गदर्शन अनुसार वीतराग देव-गुरुकी भक्ति एवं वीतराग तत्त्वज्ञानकी कल्याणी उपासनापूर्वक सादगीसे मनाया जायेगा।

नमः श्री सीमंधरदेवाय नमः श्री कहानगुरुदेवाय वन्दे भगवतीमातरम्

श्री दिगंबर जैन स्वाध्यायमंदिर ट्रस्ट, सोनगढ प्रेरित

श्री कहान पुष्प परिवार आयोजित

बारहवीं बालसंस्कार अध्यात्म ज्ञान शिविर

[ता. 25-12-12 से ता. 30-12-12]

अनंत उपकारी परम पूज्य सद्गुरुदेवश्री कानजीस्वामी एवं तद् अनन्य भक्त प्रशममूर्ति पूज्य बहिनश्री चंपाबेनके धर्मप्रभावनायोगसे हम सब मुमुक्षुगण सत्य शुद्धात्माको प्राप्त करनेका मार्ग समझ पाये हैं। यह गहरे तत्त्व संस्कारोंका सिंचन हमारे बालकोंमें भी हो यह अत्यंत आवश्यक है। इस हेतुको लक्ष्यमें रखकर श्री कहान पुष्प परिवार पिछले ग्यारह वर्षोंसे बाल संस्कार शिविरोंका आयोजन कर रहा है। इसी शृंखलामें इस वर्ष भी परमोपकारी संत पूज्य गुरुदेवश्री एवं पूज्य बहिनश्रीकी साधनाभूमि सुवर्णपुरीमें ता. 25-12-12 से ता. 30-12-12 तक बारहवीं बाल संस्कार शिविरका आयोजन किया गया है। सभी मुमुक्षुओंको निवेदन है कि वे अपने बालकोंको शिविरका लाभ लेने हेतु अवश्य लेकर आये।

इस शिविरमें आनेसे बालकोंको धार्मिक संस्कार सिंचनके साथ पूज्य गुरुदेवश्री एवं पूज्य बहिनश्रीकी साधनाभूमि सुवर्णपुरीके जिनायतनोंमें स्थित जिनेन्द्र भगवन्तोंके दर्शन-पूजन-भक्तिका, पूज्य गुरुदेवश्रीके कल्याणकारी सीडी प्रवचनोंका भी लाभ प्राप्त होगा।

यह शिविर १० से १८ सालके बच्चोंके लिए आयोजित किया गया है।

इस शिविरमें बालकोंके उपरांत वयस्कोंके लिए भी शिक्षण वर्गोंका आयोजन किया जाएगा। इस शिविरके दौरान तीर्थयात्राका विशेष कार्यक्रम रखा गया है। जो शिविर दरमियान घोषित किया जाएगा ।

इस शिविरको श्रीमती वर्षाबेन निरंजनभाई डेलीवाला परिवार, सुरेन्द्रनगरके सौजन्यसे आयोजित किया गया है।

लि.

कहान पुष्प परिवारकी ओरसे

श्री हसमुखभाई वोरा श्री जितुभाई शाह

ग्रंथोपम 'बहिनश्रीके वचनामृत' पर पूज्य गुरुदेवश्रीके प्रवचन

['बहिनश्रीके वचनामृत' पर पूज्य गुरुदेवश्रीके द्वारा १८१ प्रवचन हुए हैं। उसमेंसे वचनामृत बोल ६५ का प्रवचन दिया जा रहा है।]

वचनामृत-६५

देव-गुरुकी वाणी और देव-शास्त्र-गुरुकी महिमा चैतन्यदेवकी महिमा जागृत करनेमें, उसके गहरे संस्कार दृढ़ करनेमें तथा स्वरूपप्राप्ति करनेमें निमित्त हैं ॥ ६५ ॥

'देव-गुरुकी वाणी'...

पहले तो देव किसे कहा जाय वह परीक्षा होनी चाहिये। जो अठारह दोष रहित है, जिसे क्षुधा या तृषा नहीं है आहार-जल नहीं है, किसी प्रकारकी इच्छा नहीं है, निद्रा आदि नहीं है और जिसे सम्पूर्ण वीतराग एवं सर्वज्ञदशा प्रकट हुई है, उसे देव कहा जाता है। (जिसे) अभी तो परम हितोपदेशी सर्वज्ञ वीतरागकी भी खबर न हो उसे अंतरमें निज आत्मदेव कौन है? उसकी क्या खबर पड़ेगी? अहा! ज्ञान आनन्दादि दिव्य शक्तियोंका भण्डार जिनके सम्पूर्ण खुल गया है वे देव हैं। उनके शरीर हो तथापि क्षुधा-तृषा और रोगादि नहीं हैं। शरीर रहित हुए सिद्ध भी देव हैं; परन्तु यहाँ तो देव-गुरुकी वाणी लेना! अरिहंत दशामें हैं उनको वाणी होती है, अशरीरी सिद्धको वाणी नहीं होती।

अरिहंत वीतराग सर्वज्ञ परमात्मा वे देव; और जिनको आत्माकी प्रतीति एवं अनुभव सहित अंतरमें उग्र रमणता होनेसे अंतर-बाह्य निर्ग्रन्थ नग्न दशा हुई है वे गुरु। जिनके अंतरमें वस्त्रका विकल्प भी नहीं है और बाह्यमें वस्त्रका टुकड़ा भी नहीं है तथा जो अतीन्द्रिय आनन्दके स्वादमें उग्ररूपसे परिणमन कर रहे हैं उन्हें वीतरागमार्गके सच्चे गुरु कहते हैं। जो यथार्थ देव गुरु हैं उनकी वाणी आत्माको समझनेमें तथा अनुभव करनेमें निमित्त होती है, कल्पित देव और गुरुकी वाणी नहीं।

... 'और देव-शास्त्र-गुरुकी महिमा चैतन्यदेवकी महिमा जागृत करनेमें'...

देव-गुरुकी वाणी और देव-शास्त्र-गुरुकी महिमा चैतन्यदेवकी महिमा जागृत करनेमें निमित्त हैं। स्वयं अंतरमें अपने आत्मदेवकी महिमा जागृत करे तो उन्हें निमित्त कहा जाता है।

(शेष देखे पृष्ठ १४ पर)

आत्मधर्म
नवम्बर २०१२
अंक-३ ❀ वर्ष-७

Registered Regn. No. BVR-368/2012-2014
Renewed upto 31-12-2014
RNI Registration No. GUJHIN/2006/18882
वार्षिक शुल्क ९=०० आजीवन शुल्क १०१=००

Printed & published by Jitendra Vrajlal Shah on behalf of shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust and Printed at Kahan Mudranalay, Jain Vidhyarthi Gruh, At-Songadh Pin-364250 and published from Shri Digambar Jain Swadhyay Mandir Trust At-Songadh, Ta. sihor, Dist. Bhavnagar Pin-364250.

Editor : Rameshchandra Kantilal Maheta.

If undelivered Please return to :—
Shri Dig. Jain Swadhyay Mandir Trust
SONGADH-364 250 (INDIA)
Phone No. (02846) 244334
Fax (02846) 244662

www.kanjiswami.org
email : contact@kanjiswami.org